सिक्का बदल गया

कृष्णा सोबती

खद्दर की चादर ओढ़े, हाथ में माला लिये शाहनी जब दरिया के किनारे पहुँची तो पौ फट रही थी। आसमान के परदे पर लालिमा फैलती जा रही थी। शाहनी ने कपड़े उतारकर एक ओर रखे और 'श्री राम, श्री राम' करती पानी में हो ली। अंजलि भरकर सूर्य देवता को नमस्कार किया, अपनी उनींदी आँखों पर छींटे दिये और पानी से लिपट गयी।

चनाब का पानी आज भी पहले-सा सर्द था, लहरें लहरों को चूम रही थीं। सामने कश्मीर की पहाड़ियों से बर्फ पिघल रही थी। उछल-उछल आते पानी के भँवरों से टकराकर कगार गिर रहे थे लेकिन दूर-दूर तक बिछी रेत आज न जाने क्यों खामोश लगती थी। शाहनी ने कपड़े पहने, इधर-उधर देखा, कहीं किसी की परछाईं तक न थी। पर नीचे रेत में अगणित पाँवों के निशान थे। वह कुछ सहम-सी उठी!

आज इस प्रभात की मीठी नीरवता में न जाने क्यों कुछ भयावना-सा लग रहा है। वह पिछले पचास वर्षों से यहाँ नहाती आ रही है। कितना लम्बा अरसा है! शाहनी सोचती है, एक दिन इसी दरिया के किनारे वह दुल्हन बनकर उतरी थी और आज···

आज शाहजी नहीं, उसका वह पढ़ा-लिखा लड़का नहीं, आज वह अकेली है, शाहजी की लम्बी-चौड़ी हवेली में अकेली है। पर नहीं···यह क्या सोच रही है वह सबेरे-सबेरे। अब भी दुनियादारी से मन नहीं फिरा उसका। शाहनी ने लम्बी साँस ली और 'श्रीराम, श्रीराम' करती बाजरे के खेतों से होते घर की राह ली। कहीं-कहीं लिपे-पुते आँगनों पर से धुआँ उठ रहा था। टन-टन-बैलों की घंटियाँ बज उठती हैं। फिर भी···फिर भी कुछ कुछ बँधा-बँधा-सा लग रहा

है। शाहनी ने नजर उठायी। यह मीलों फैले खेत अपने ही हैं। भरी-भरायी नयी फसल को देखकर शाहनी किसी अचानक के मोह में भीग गयी। यह सब शाहनी की बरकतें हैं। दूर-दूर गाँवों तक फैली हुई ज़मीनें, ज़मीनों में कुएँ—सब अपने हैं। साल में तीन फसल, ज़मीन तो सोना उगलती है। शाहनी कुएँ की ओर बढ़ी, आवाज़ दी, "शेरे, शेरे, हसैना, हसैना···"

शेरा शाहनी का स्वर पहचानता है। वह न पहचानेगा! अपनी माँ जैना के मरने के बाद वह शाहनी के पास ही पलकर बड़ा हुआ। उसने पास पड़ा गँड़ासा 'शटाले' के ढेर के नीचे सरका दिया। हाथ में हुक्का पकड़कर बोला, "ऐ···हसैना ···सैना···" शाहनी की आवाज़ उसे कैसे हिला गयी है। अभी तो वह सोच रहा था कि उस शाहनी को ऊँची हवेली की अँधेरी कोठरी में पड़ी सोने-चाँदी की संदूकचियाँ उठाकर···कि तभी 'शेरे शेरे···'शेरा गुस्से से भर गया। किस पर निकाले अपना क्रोध? शाहनी पर चीखकर बोला, "ऐ मर गयीं एँ—रब्ब तैनू मौत दे···"

हसैना आटेवाली कनाली एक ओर रख, जल्दी-जल्दी बाहर निकल आयी, "ऐ आयी आँ···क्यों छाबेले (सुबह-सुबह) तड़पना एँ?"

अब तक शाहनी नज़दीक पहुँच चुकी थी। शेरे की तेज़ी सुन चुकी थी। प्यार से बोली, "हसैना, यह वक्त लड़ने का है? वह पागल है तो तू ही जिगरा कर लिया कर।"

"जिगरा!" हसैना ने मानभरे स्वर में कहा, "शाहनी, लड़का आखिर लड़का ही है। कभी शेरे से भी पूछा है कि मुँह-अँधेरे क्यों गालियाँ बरसायी हैं इसने?" शाहनी ने लाड़ से हसैना की पीठ पर हाथ फेरा, हँसकर बोली, "पगली मुझे तो लड़के से बहू अधिक प्यारी है! शेरे···"

"हाँ शाहनी!"

"मालूम होता है, रात को कुल्लूवाल के लोग आये हैं यहाँ?" शाहनी ने गंभीर स्वर में कहा।

शेरे ने जरा रुककर घबराकर कहा—"नहीं···शाहनी!" शेरे के उत्तर को अनसुनी कर शाहनी जरा चिंतित स्वर से बोली, "जो कुछ भी हो रहा है, अच्छा नहीं। शेरे, आज शाहजी होते तो शायद कुछ बीच-बचाव करते। पर···" शाहनी कहते-कहते रुक गयी। आज क्या हो रहा है। शाहनी को लगा जैसे जी भर-भर आ रहा है···शाहजी को बिछड़े कई साल बीत गये, पर···पर आज कुछ पिघल रहा है···शायद पिछली स्मृतियाँ···आँसुओं को रोकने के प्रयत्न में उसने हसैना की ओर देखा और हल्के से हँस पड़ी। और शेरा सोच ही रहा है, 'क्या कह रही है शाहनी आज! आज शाहजी क्या, कोई भी कुछ नहीं कर सकता। यह हो के रहेगा—क्यों न हो? हमारे ही भाई-बंदों से सूद ले-लेकर शाहजी सोने की बोरियाँ तोला करते थे। प्रतिहिंसा की आग शेरे की आँखों में उतर आयी। गँड़ासे

की याद हो आयी। शाहनी की ओर देखा—नहीं-नहीं, शेरा, इन पिछले दिनों में तीस-चालीस कत्ल कर चुका है पर···पर वह ऐसा नीच नहीं···सामने बैठी शाहनी नहीं, शाहनी के हाथ उसकी आँखों में तैर गये। वह सर्दियों की रातें—कभी-कभी शाहजी की डाँट खा के वह हवेली में पड़ा रहता था और फिर लालटेन की रोशनी में वह देखता है, शाहजी के ममता-भरे हाथ दूध का कटोरा थामे हुए, 'शेरे-शेरे उठ, पी ले।' शेरे ने शाहनी के झुर्रियाँ पड़े मुँह की ओर देखा तो शाहनी धीरे-धीरे से मुस्करा रही थी। शेरा विचलित हो गया। आखिर शाहनी ने क्या बिगाड़ा है हमारा? शाहजी की बात शाहनी के साथ गयी, वह शाहनी को जरूर बचायेगा, लेकिन कल रात वाला मशविरा वह कैसे मान गया था। फिरोज की बात, "सब कुछ ठीक हो जायेगा···सामान बाँट लिया जायेगा।"

"शाहनी, चलो तुम्हें घर तक छोड़ आऊँ।"

शाहनी उठ खड़ी हुई। किसी गहरी सोच में चलती हुई शाहनी के पीछे-पीछे मजबूत कदम उठाता शेरा चल रहा है। शंकित-सा इधर-उधर देखता जा रहा है। अपने साथियों की बातें उसके कानों में गूँज रही हैं। पर क्या होगा शाहनी को मारकर?

"शाहनी!"

"हाँ शेरे?"

शेरा चाहता है कि सिर पर आनेवाले खतरे की बात कुछ तो शाहनी को बता दे, मगर वह कैसे कहे?

"शाहनी···"

शाहनी ने सिर ऊँचा किया। आसमान धुएँ से भर गया था। "शेरे···"

शेरा जानता है यह आग है। जबलपुर में आज आग लगनी थी, लग गयी। शाहनी कुछ न कह सकी। उसके नाते-रिश्ते सब वहीं हैं।

हवेली आ गयी। शाहनी ने शून्य मन से ड्योढ़ी में कदम रखा। शेरा कब लौट गया उसे कुछ पता नहीं, दुर्बल-सी देह और अकेली, बिना किसी सहारे के न जाने कब तक वहीं पड़ी रही शाहनी। दुपहर आयी और चली गयी। हवेली खुली पड़ी है। आज शाहनी नहीं उठ पा रही है। जैसे उसका अधिकार आज स्वयं ही उससे छूट रहा है। शाहजी के घर की मालकिन···लेकिन नहीं, आज मोह नहीं हट रहा है मानो पत्थर हो गयी हो। पड़े-पड़े शाम हो गयी; पर उठने की बात फिर भी नहीं सोच पा रही। अचानक रसूली की आवाज सुनकर चौंक उठी।

"शाहनी-शाहनी, सुनो ट्रकें आती हैं लेने?"

"ट्रकें···?" शाहनी इसके सिवाय और कुछ न कह सकी। हाथों ने एक-दूसरे को थाम लिया। बात की बात में खबर गाँव भर में फैल गयी। बीवी ने अपने विकृत कंठ से कहा; "शाहनी, आज तक कभी ऐसा न हुआ, न कभी सुना। गजब

हो गया, अँधेर पड़ गया।"

शाहनी मूर्तिवत् वहीं खड़ी रही। नवाब बीवी ने स्नेह-सनी उदासी से कहा, "शाहनी, हमने कभी न सोचा था।"

शाहनी क्या कहे कि उसी ने ऐसा कब सोचा था? नीचे से पटवारी बेगू और जैलदार की बातचीत सुनायी दी। शाहनी समझी कि वक्त आ पहुँचा। मशीन की तरह नीचे उतरी, पर ड्योढ़ी न लाँघ सकी। किसी गहरी, बहुत गहरी आवाज से पूछा, "कौन?···कौन है वहाँ?"

कौन नहीं है आज वहाँ? सारा गाँव है, जो उसके इशारे पर नाचता था कभी। उसकी असामियाँ हैं जिन्हें उसने अपने नाते-रिश्तों से कभी कम नहीं समझा। लेकिन नहीं, आज उसका कोई नहीं, आज वह अकेली है? यह भीड़ की भीड़, उनमें कुल्लूवाल के जाट। वह क्या सुबह ही न समझा गयी थी?

बेगू पटवारी और मसीत के मुल्ला इस्माइल ने जाने क्या सोचा? शाहनी के निकट आ खड़े हुए। बेगू आज शाहनी की ओर देख नहीं पा रहा। धीरे से जरा गला साफ करते हुए कहा, "शाहनी, रब्ब नु एही मंजूर सी।"

शाहनी के कदम डोल गये। चक्कर आया और दीवार के साथ लग गयी। इसी दिन के लिए छोड़ गये थे शाहजी उसे? बेजान-सी शाहनी की ओर देखकर बेगू सोच रहा है, क्या गुजर रही है शाहनी पर! मगर क्या हो सकता है सिक्का बदल गया है···'

शाहनी का घर से निकलना छोटी-सी बात नहीं। गाँव का गाँव खड़ा है, हवेली के दरवाजे से लेकर उस दारे तक, जिसे शाहनी ने अपने पुत्र की शादी में बनवा दिया था। तब से लेकर आज तक सब फैसले, सब मशविरे यहीं होते रहे हैं। इस बड़ी हवेली को लूट लेने की बात भी यहीं सोची गयी थी।

यह नहीं कि शाहनी कुछ न जानती हो। वह जानकर भी अनजान बनी रही। उसने कभी बैर नहीं जाना। किसी का बुरा नहीं किया। लेकिन बूढ़ी शाहनी यह नहीं जानती कि सिक्का बदल गया है।···

देर हो रही थी। दाऊद खाँ जरा अकड़कर आगे आया और ड्योढ़ी पर खड़ी निर्जीव छाया को देखकर ठिटक गया। वही शाहनी है जिसके शाहजी उसके लिए दरिया के किनारे खेमे लगवा दिया करते थे···यह तो वही शाहनी है जिसने उसकी मँगेतर को सोने के कर्नफूल दिये थे मुँह दिखायी में। अभी उसी दिन वह जब 'लीग' के सिलसिले में आया था तो उसने उद्दंडता से कहा था, "शाहनी, भागोवाल मसीत बनेगी। तीन सौ रुपया देना पड़ेगा।" शाहनी ने अपने उसी सरल स्वभाव से तीन सौ रुपये आगे रख दिये थे। और आज···?

"शाहनी!" दाऊद खाँ ने आवाज दी। वह थानेदार है, नहीं तो उसका स्वर

शायद आँखों में उतर आता।

शाहनी गुमसुम, कुछ न बोल पायी।

"शाहनी !" ड्योढ़ी के निकट जाकर बोला, "देर हो रही है शाहनी (धीरे से) कुछ साथ रखना हो तो रख लो। कुछ साथ बाँध लिया है ? सोना-चाँदी···"

शाहनी अस्फुट स्वर में बोली, "सोना-चाँदी !" जरा ठहरकर सादगी से कहा, "सोना-चाँदी बच्चा, वह सब कुछ तुम लोगों के लिए है। मेरा सोना तो एक-एक जमीन में बिछा है।"

दाऊद खाँ लज्जित-सा हो गया, "शाहनी, तुम अकेली हो। अपने पास कुछ होना जरूरी है। कुछ नकदी ही रख लो। वक्त का कुछ पता नहीं।"

"वक्त," शाहनी अपनी गीली आँखों से हँस पड़ी, "दाऊद खाँ, इससे अच्छा वक्त देखने के लिए क्या मैं जिन्दा रहूँगी।" किसी गहरी वेदना और तिरस्कार से कह दिया शाहनी ने।

दाऊद खाँ निरुत्तर है। साहस कर बोला, "शाहनी, कुछ नकदी जरूरी है।"

"नहीं बच्चा, मुझे इस घर से···" शाहनी का गला रुँध गया, "नकदी प्यारी नहीं। यहाँ की नकदी यहीं रहेगी।"

शेरा पास आ खड़ा हुआ। दूर खड़े-खड़े उसने दाऊद खाँ को शाहनी के पास देखा तो शक गुजरा कि हो न हो कुछ मार रहा हो शाहनी से।

"खाँ साहब, देर हो रही है···"

शाहनी चौंक पड़ी। देर···मेरे घर में मुझे देर ! आँसुओं की भँवर में न जाने कहाँ से विद्रोह उमड़ पड़ा। मैं पुरखों के इस बड़े घर की रानी और यह मेरे ही अन्न पर पले हुए···नहीं, यह सब कुछ नहीं, ठीक है···देर हो रही है। शाहनी के जैसे कानों में यही गूँज रहा है—देर हो रही है···पर नहीं, रो-रोकर नहीं शान से निकलेगी इस पुरखों के घर से। मान से लाँघेगी यह देहरी, जिस पर एक दिन बहू रानी बनकर आ खड़ी हुई थी।

अपने लड़खड़ाते कदमों को सँभालकर शाहनी ने दुपट्टे से आँखें पोंछीं और ड्योढ़ी से बाहर हो गयी। बड़ी बूढ़ियाँ रो पड़ीं। उनके दुख-सुख की साथिन आज इस घर से निकल पड़ी है। किसकी तुलना हो सकती थी इसके साथ। खुदा ने सब कुछ दिया था, मगर दिन बदले, वक्त बदले···

शाहनी ने दुपट्टे से सिर ढाँपकर धुँधली आँखों से हवेली को अन्तिम बार देखा। उसने दोनों हाथ जोड़ लिये—यही अन्तिम दर्शन था, अन्तिम प्रणाम था। शाहनी ने ज़ोर मारा···सोचा, एक बार घूम-फिरकर पूरा घर क्यों न देख आऊँ मैं ? जी छोटा हो रहा है, पर जिनके सामने हमेशा बड़ी बनी रही है उनके सामने वह छोटी न होगी। इतना ही ठीक है। बस हो चुका। सिर झुकाया। ड्योढ़ी के आगे कुल-

वधू की आंखों से निकलकर कुछ बूँदें चू पड़ीं। शाहनी चल दी—ऊँचा भवन पीछे खड़ा रह गया। दाऊद खाँ, शेरा, पटवारी, जैलदार और छोटे-बड़े, बच्चे-बूढ़े, मर्द-औरतें सब पीछे-पीछे।

ट्रकें अब तक भर चुकी थीं। शाहनी अपने को खींच रही थी। गाँव वालों के गलों में जैसे धुआँ उठ रहा है। शेरे, खूनी शेरे का दिल टूट रहा है। दाऊद खाँ ने आगे बढ़कर ट्रक का दरवाजा खोला। शाहनी बढ़ी। इस्माइल ने आगे बढ़कर भारी आवाज़ से कहा, "शाहनी, कुछ कह जाओ, तुम्हारे मुँह से निकली असीस झूठ नहीं हो सकती।" और अपने साफे से आँखों का पानी पोंछ लिया। शाहनी ने उठती हुई हिचकी को रोककर रुँधे-रुँधे गले से कहा, "रब्ब तुहानू सलामत रक्खे बच्चा, खुशियाँ बख्शे···!"

वह छोटा-सा जनसमूह रो दिया। जरा भी दिल में मैल नहीं शाहनी के। और हम···हम शाहनी को नहीं रख सके। शेरे ने बढ़कर शाहनी के पाँव छुए, "शाहनी कोई कुछ नहीं कर सका। राज भी पलट गया···" शाहनी ने काँपता हुआ हाथ शेरे के सिर पर रक्खा और रुक-रुककर कहा, "तैनू भाग जगण चन्ना।" (ओ चाँद, तेरे भाग्य जागें) दाऊद खाँ ने हाथ का संकेत किया। कुछ बड़ी-बूढ़ियाँ शाहनी के गले लगीं और ट्रक चल पड़ी।

अन्न-जल उठ गया। वह हवेली, नयी बैठक, ऊँचा चौबारा, बड़ा 'पसार' एक-एक करके घूम रहे हैं शाहनी की आँखों में। कुछ पता नहीं—ट्रक चल रहा है या वह स्वयं चल रही है। आँखें बरस रही हैं, दाऊद खाँ विचलित होकर देख रहा है इस बूढ़ी शाहनी को। कहाँ जायेगी अब वह ?

"शाहनी, मन में मैल न लाना। कुछ कर सकते तो उठा न रखते। वकत ही ऐसा है। राज पलट गया है। सिक्का बदल गया है···"

रात को शाहनी जब कैंप में पहुँचकर जमीन पर पड़ी तो लेटे-लेटे आहत मन से सोचा, 'राज पलट गया है···सिक्का क्या बदलेगा ? वह तो मैं वहीं छोड़ आयी···'

और शाहनी की आँखें और भी गीली हो गयीं।

आसपास के हरे-भरे खेतों से घिरे गाँवों में रात खून बरसा रही थी।

शायद राज भी पलटा खा रहा था और···सिक्का बदल रहा था···